



मालवा के मांडणे (चित्रावण)

डॉ. चिन्तामणि राठौर

15 तात्पाटोपे मार्ग, फ्रीगंज उज्जैन (म.प्र.)

Email – chintamanir1962@gmail.com, dr.chintamanrathore@gmail.com

Mob- 9407158670, 8871917502

भारत की लोक संस्कृति बड़ी समृद्ध है हमारे मालवांचल में चित्रावण की अपनी खास लोकशैली और शिल्प है, मालवा के अपने लोक चित्रों में अनूठी शैली और अपनी अनूठी परम्पराएँ हैं हमारे मालवा में ऐसा कहा जाता था - मालव भूमि गहन गम्भीर, डग-डग रोटी, पग-पग नीर हमारा मालवा पठारी भाग का हि-हिस्सा होने के कारण खेतीबाड़ी के मामले में शुरू से ही सम्पन्न रहा है। मालवा के हर अंचल में मांडणे की कला मौजूद है इस शिल्प में सिर्फ सौन्दर्य बोध ही नहीं मौलिकता और कौशल भी प्रगट होता है। मालवा के मांडणा हमारी प्राचीन सभ्यता और संस्कृति की समृद्धि का प्रतीक है लेखक स्वयं ने दीवाली की रंगाई-पुताई के बाद अपने धरों पर की फर्श व दीवारों पर सफेद लाल रू-गुलाबी परम्परागत मांडणे बनाया है। जबकि सिन्धु घाटी सभ्यता में भी इन मांडणे के चिन्ह पाये जाते हैं और तो और इन्हें चैंसठ कलाओं में भी गिना जाता है। स्वयं हमने सम्पूर्ण मालवांचल में हमारी नानी और दादी व बड़ी बहन बुआ को भी विभिन्न प्रकार के मांडणे बनाते देखे हैं व आज भी ग्रामीण क्षेत्र के पुराने टपरी टाईप धरों में ये परम्परा जिन्दा है।

मालवा का लोक चित्रावल यानी चित्र बनाने की कला व शिल्प हमारी दादी और नानी के हाथों एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को देते हुए एडसे हमेशा जिन्दा रखने का प्रयास रहा है और आज भी ग्रामीण परिवेश में ये संधनता से मिलता है। हमारा देश में ऐसा कोई त्यौहार, अनुष्ठान या शादी-विवाह व अन्य प्रसंग नहीं होता, जब मांडने या रंगोली आदि नहीं बनाए जाते हैं खासकर मालवा और निमाड में तो मांडने का बहुत महत्व है। हमारे समाज की महिलाएँ ही इस शिल्प व कला की मुख्य निर्देशिका होती हैं क्योंकि ये कला किसी एक व्यक्ति या चित्रकार की नहीं होती है बल्कि समुचे समाज का योगदान होता है।

खासकर मालवा में मांडणों दो रंगों से बनाए जाते हैं शुरूवाती दौर में तो चुना, खड़िया, चाक, गेरू से प्राचीनकाल से मांडणे बनाये जाते रहे हैं, हालांकि बाद में कई और रंग भी जुड़ने लगे, जैसे रू-गुलाबी, नीला और हरा, जो गाँवों में आसानी से हाट बाजार में मिल जाया करते हैं, दो ही रंग प्रमुखता से बनाये जाते हैं। खड़िया मिट्टी से सफेद और

गेरू से लाल रंग बनाया जाता है दोनों के स्थायित्व के लिए गोंद व सरस का उपयोग किया जाता है फिर अनामिका ऊँगली से मांडणे मांडे जाते हैं या फिर एक तरीका और है जब कपड़े के छोटे से टुकड़े को घोल में भोगोकर चीटों उंगली से मांडणा मोडे जाता है हमेशा मांडणा बीच से शुरू किया जाता है फिर चारों ओर से बढ़ाया जाता है खासकर देखने में आया है कि मांडणों में ज्यामिती, त्रिभूज, षष्टकोण आकारों का बाहु ल्यहोता है। सामान्यतया हमारे घर की दादी या नानी जो इस कार्य में निपुण होती है गेरू के घोल से मुख्य आकार बनाती है व पारिवारिक बहु-बेटी छोटी बच्चीयाँ उन रेखाओं के बीच में आड़ी-तिरछी लकीरों से चुने या खड़िया का रंग भरते जाते हैं। माडनों का बड़ा महत्व होता है इन्हें कभी मिटाया नहीं जाता है और तो और हर आंगन-कमरे के मांडणे अलग-अलग कला में परिपूर्ण होते हैं आंगन का मांडणा सबसे अलग व सजीला सबसे बड़ा होता है और दहलीज का सबसे छोटा होता है रसोइ घर/पूजाघर/मुडेर, तुलसी चोबरे का सब का मांडणा अलग-अलग होता है हर आंगन का शिल्प अलग होता है। इसी के साथ आकार व आकृति भी बदल जाते हैं इसके पीछे बड़े मनोवैज्ञानिक आधार होते हैं जो हमारी दादी और नानी को हमारे पूर्वजों द्वारा अर्जित अनुभवों से प्राप्त हु वेहैं।

मालवा और निमाड़ के दर्शन में भादों और कुंवार के महिनों में कन्याएँ लगातार 15 दिन तक घरों की दीवार पर गोबर से संजा बनाती है गोबर से विभिन्न प्रकार की आकृतियाँ उकेरी जाती है और आसानी से मिलने वाले फूल व पत्तियाँ, कागज और रंगीन पन्निया के टुकड़े से सजाया जाता है और चारों तरफ एक बड़ा किलाकोट बनाया जाता है इस किला कोट के अन्दर प्रमुख रूप से चाँद-सूरज, तारे, पंखा, डोकरा-डोकरी, गाड़ी बैल, जाड़ी जसोदा, पतली पेमा आदि आकृतियाँ, प्रतिदिन बनाई जाती है और रोजाना इसकी आरती उतारकर लड़कियाँ व छोटे बच्चे लय में लय मिलाकर लोकगीत गाती है लेखक स्वयं ने बचपन में संजा की लोकगीत गाये हैं संजाबाई तू थोरे घर जा, थारी माँ मोरगी-पिटेगी के डेली पर डचगेंणी, इस लोक गीत में जीवन के काम आने वालों सिख भी होती है और हँसी-मजाक के कुछ पल की याद भी होती है।

मांडणा का अर्थ -

मांडणा का अर्थ होता है घर के लिपे - पूते फर्श पर रेखाओं के जरिये चित्रण करना। मालवा-निमाड़-बुन्देलखण्ड में मांडणे बनाए जाने की परम्परा बहुत पुरानी है हमारी दादीयाँ और नानीयाँ अपनी माँ और सास से खीखते हु वे पीढ़ी-दर-पीढ़ी इस परम्परा को आगे बढ़ाती हैं, हमारी परम्परा में कोई त्यौहार हो, शादी-ब्याह हो, होली-दिवाली हो या कोई रस्म रिवाज करना हो तो मांडणे जरूर बनाये जाते हैं। जनोंई संस्कार हो, माता पूजा या शादी की गणेश

पूजा हो अनिवार्य रूप से मांडणे बनाये जाते हैं। ग्रामीण बालक व बालिकाएँ बचपन से ही मांडणों को आकार देने का कार्य संजा के रूप में शुरू कर पूर्ण प्रशिक्षण प्राप्त कर लेते हैं संझा रानी को आकार देते-देते लोककला के साथ पारम्परिक आकृतियों में ज्योमिती भी सिख जाते हैं, ज्योमिती आकार में वृत्त, चतुर्भुज, त्रिभुज, स्वास्तिक तथा अन्य मंगलकारी शंख, कमल, मोर, हाथी, घंटी, रथ आदि का चित्रांकन सिख जाते हैं। ये लोककला व शिल्प सहज ही ग्रामीण परिवेश के बच्चे सिख जाते हैं इस कही प्रशिक्षण देने नहीं जाना पड़ता है बालिकाओं के साथ-साथ बालक भी लोकगीत में निपूण हो जाते हैं।

मांडणे के प्रकार -

मालवा-निमाड़-बुन्देलखण्ड व भारत के विभिन्न आंचलों में लगभग एक समानता पायी जाती है। कही पर भित्ति चित्रों व मांडणों में फर्श व आंगन पर फूल-पत्ती, गाय बैल, गाय बैल के पैर (खूर) और कई तरह की आकृतियाँ उकेरी जाती है तिज त्यौहार पर या खासकर होली दिवाली पर गाय-बैलों को नहलाने-धुलाने के बाद उन पर रंगों से कई तरह की आकृतियाँ बनाने का रिवाज इन आंचलों में पाया जाता है। यह कला किसी व्यक्ति विशेष की कृति नहीं होती है बल्कि सभी लोक की सामूहिक अभिव्यक्ति होती है मांडणे का अर्थ किसी भी सतही धरातल पर रेखाओं द्वारा चित्रण से माना जाता है मांडणों के अन्तर्गत वे सभी आकृतियाँ आती हैं, जो धरती या दीवारों पर बनाई जाती है आधुनिक काल की रंगोली उसी का नया रूप ही है पर मांडणे का एक अपना महत्व है मांडणे रंगोली की तुलना में ज्यादा समय तक बने रहते हैं इसी कारण ये महीनों तक स्थाई रहते हैं मांडणे के लिए कोई स्थाई सांचे या फर्मे नहीं होते हैं, अनगढ़ हाथों से ही इन्हें बनाया जा सकता है। इसी कारण इस शिल्प में सौन्दर्य का बोध होता है। मालवा-निमाड़ में तिथि, उत्सव या त्यौहार ऐसा नहीं होता है जब लीपे-पुते आंगन में घर की महिलाये मांडणे न बनाती हो हमारे प्रत्येक त्यौहार पर मांडणे का चित्रांकन करने की परम्परा है तथा जो सामान्य लोककल्याण की भावनाओं से ओतप्रोत रहती है। लोक जीवन में घरों को सजाने की लोककला में मांडणे को सबसे ऊपर माना जाता है। आइये हमारी ग्रामीण शिल्प कला देखने मालवा के विभिन्न आंचलों में दीवाली पर यह कला लोकप्रथा का रूप धारण कर लेती है गोबर या मिट्टी से लिये दीवारों पर इनकी सुन्दरता देखते ही बनती है आँखों को बड़ा सुकून मिलता है लोगों का उत्सही मन खिल जाता है और तो और हमारे इस आंचल में होली-दशहरा-दीवाली के साथ शादी ब्याह में भी माता पूजन, गणेश पूजन और मंडप के लिए मांडणे बनाए जाते हैं।

मांडणे की शिल्पकलाओं व भित्ति चित्रांकन का विषय आमतौर पर जनजीवन से जुड़ा होता है, देवी-देवताओं से सम्बन्धित चित्रों के अलावा इतने पशु-पक्षियों, सूरज-चाँद, राजा-रानी, लाड़ा-लाड़ी मोर, हाथी, हल, गाय, बैल, किसान, झोपड़ी, कलश, सांतिया, फूल-पत्ती, पेड़, सेढ-सेठानी, पगलिए, ठोलन-ठोली और बहुत कुछ हास्य के चित्रांकन होते हैं। मांडणे बनाने के विभिन्न प्रकार भी अब अपनाने लगे हैं कुछ आदिवासी बोंस की पतली सलाई के सिरे पर रूई बांधकर भी मांडणे बनाती हैं, कुछ महिलाये नारियल की नरेटी से भी चित्रावण करती हैं। हमारे इस क्षेत्र में गाय और बैलों को नहलाने के बाद त्यौहारों पर इनके सिंग और शरीर को रंगने का रिवाज है व इन मवेशियों पर विभिन्न प्रकार की आकृतियाँ भी बनाई जाती हैं।

कुछ और विशेषता मालवा के मांडणे की -

मालवा-निमाड़ में दो प्रकार के मांडणों की परम्पराएँ हैं, एक जिसमें त्यौहार, अनुष्ठान या ब्याह-शादी पर खड़िया-गेरू आदि से मांडणों का चित्रावण किया जाता है दूसरा प्रकार में कुछ पेशेवर चितरे भी बनाते हैं ये कार्य में दक्ष व खास लोग होते हैं, जो बाहरी दीवारों तथा मन्दिर के अहातों में इन आकृतियों और देवी-देवताओं के चित्रों की लोकशैली में उकेरते हैं। इन्हें इसके बदले एक बहुत ही छोटी राशि दी जाती है कुछ अन्य शिल्प भी ये लोग बड़ी सुन्दरता से बनाते हैं। मुख्य द्वार पर गणपति, दरवाजे के दाये सांतीया, नवरात्रि में नवरात्र के, दीवाली की पड़वा पर गोवर्धन, भाई दूज के रोज का और विवाह पर कुल देवी के आसपास लाड़ा-लाड़ी का चित्र, नागपंचमी पर नागदेवता हरियाली अमावस्या की जिरौती (पेड़-पौधे, पक्षी-तोता-मैना) दूल्हा-दूल्हन के विभिन्न रूप, मेहंदी मांडणा और चोक कलश आदि के भिन्न-भिन्न आकृतियाँ का रेखांकन इन लोक परम्परा का ही मुख्य अंग है। विवाह प्रसंग पर दरवाजे के दोनों तरफ मोर और मोरनी के चित्रों की जोड़ी बनाने का रिवाज है। जिन्हें मोर-मुरैला या मोरइला भी कहा जाता है।

भारत के विभिन्न प्रदेशों में भी मांडणों की परम्परा आज भी जीवित है। बुन्देलखण्ड हो या राजस्थान, बिहार आदि में इनके नाम अलग हो सकते हैं पर ये परम्परा सभी जगह जीवित है। विभिन्न प्रकार के नाम मांडणों के इस प्रकार हैं -

1. राजस्थान में - मांडणा
2. मालवा-निमाड़ में - मांडणो
3. उत्तरप्रदेश में चोक पूरना
4. महाराष्ट्र में -रंगोली
5. दक्षिण में - कोलम
6. आंध्र-प्रदेश में -भुग्गुल
7. बंगाल में - अल्पना
8. बिहार में - अरिचन
9. कश्मीर - टेनैरया
10. नेपाल में - मांडनो



निष्कर्ष -

लेखक का स्वयं अवलोकन - अंचलों में कुछ वर्षों से मांडणों की लोककला का हुनर लगातार कम हो रहा है अब केवल पुरानी पीढ़ी के 20% से 25% के ग्रामीण जन ही इस परम्परा का पालन कर रहे हैं। लगभग शहरी क्षेत्र में तो लोककला का कौशल और हुनर लगभग खत्म हो गया है। लगातार कई परम्पराएँ और विधाएँ लुप्त हो रही हैं, खासकर निमाड़ और मालवा के तीज-त्यौहार और उत्सव के समय कभी समृद्ध रही मांडणों की परम्परा अब दम तोड़ने लगी है। कुल मिलाकर स्वयं व शासन स्तर पर आक्सीजन की जरूरत है हमारे मालवा-निमाड़ के इस लोकचित्रावण, शिल्प व हुनरको, लेखक स्वयं ग्रामीण परिवेश से बचपन से जुड़ा है।